हमारे समाज में सामान्यतः मान्यता यह है कि अकेला व्यक्ति किसी भी तरह के परिवर्तन को या बदलाव को लाने में कोई खास योगदान नहीं दे सकता है। इसलिए हमारे यहाँ यह कहा भी जाता है कि 'अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता' है हालांकि हमारे पास ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है जिन्होंने अपने कार्यों से जमाने को हैरत में डाला है। इसी देश में एक अकेले व्यक्ति ने पहाड़ काट कर लोगों के लिए रास्ता भी बनाया है। मरने और मारने के सिद्धांतों के समानान्तर अहिंसा को अपना हथियार बनाने वाले बापू भी अकेले ही थे, बहरहाल यह और बात है कि उस रास्ते को बनाने के सफर में बहुतेरों ने उनका उपहास बनाया होगा। ठीक इसी तरह की एक घटना राजस्थान के सुदूर बांसवाड़ा जिले में भी देखने को मिल रही है। जहाँ एक अकेले शिक्षक ने उम्मीद की लौ जलाई हुई है। बिना यह परवाह किये कि लोग क्या कहेंगे?

यह कहानी है मेदिया डिंडोर की जो कि बांसवाड़ा (राजस्थान) का एक गाँव है। यह जिला पिछड़ा एवं आदिवासी बाहुल्य इलाकों में आता हैं। इस इलाके में शिक्षा का खासा अभाव नजर आता है। ग्रामीणों में नशीले पदार्थों का यहाँ सेवन आम है। जिस कारण गाँव के स्कूल के शिक्षक उनसे दूर रहना ज्यादा पसंद करते हैं। यही कारण है कि यहाँ के शिक्षकों एवं ग्रामीणों में संवाद स्थापित करने का स्कूल एक बेहतर साधन बन नहीं पाया और शिक्षकों द्वारा यह मान लिया गया है कि यहाँ के लोगों का कुछ हो ही नहीं सकता है। ठीक इसी तरह की सोच रखने वाले एक शिक्षक रहे हैं विजय जैन। जिन्होंने न सिर्फ अपनी सोच बदली है बल्कि दूसरों को भी बदलने का कार्य किया है। विजय जी ने न केवल ग्रामीणों को स्कूल से जोड़ा है बल्कि स्टॉफ और ग्रामीणों के बीच, स्कूल को संवाद का सशक्त माध्यम भी बनाया है। विजय जी बताते हैं कि वो जब 2016 में मेदिया डिंडोर में आए तो स्कूल की स्थिति देख कर दंग रह गए। यह उन्हें स्कूल कम सार्वजनिक स्थल ज्यादा जान पड़ रहा था। स्कूल में जगह–जगह पर ग्रामीणों द्वारा मल किया गया था। स्कूल की हालत जर्जर थी। एक बार को लगा कि मैं जाने कहाँ आकर फंस गया हूँ।

स्कूल में बच्चों का नामांकन देखा तो काफी कम था और ऊपर से बच्चे अनियमित भी थे। स्कूल में थोड़ा समय बिताने के बाद में समझ आया कि स्कूल गाँव में तो था पर गाँव और स्कूल में किसी तरह का आत्मीय संबंध नहीं था या यूं कहें कि इस प्रकार का संबंध, कभी स्कूल के कर्मचारियों और गाँव वालों में, विकसित ही नहीं हो पाया था। एक मात्र बच्चे ही थे जो स्कूल आते थे और पास होकर चले जाते थे। स्कूल अपनी जर्जर स्थिति में गाँव के मुहाने पर खड़ा था, जिसके रसोई और

प्रांगण को गाँव वालों ने सार्वजनिक शौचालय बनाया हुआ था। यह मेरे लिए बड़ी समस्या थी कि जब तक स्कूल का ही विकास नहीं होगा तो स्कूल बच्चों का विकास कैसे करेगा? मैंने स्कूल की समस्या से निपटने के लिए स्टाफ से सहयोग माँगा पर निराशा हाथ लगी तो स्वयं ही उन बच्चों के घर जाना शुरू किया, जो अनियमित थे। उनके अभिभावकों से बातचीत करना भी शुरू किया। यह वो काम था जो कभी हुआ ही नहीं था। इसके अलावा बच्चों के साथ मिलकर स्वयं झाड़ू लेकर स्कूल सफाई का कार्य शुरू किया। सफाई कार्य पूरा होने के बाद स्कूल परिसर में वृक्षारोपण का कार्यक्रम रखा और गाँव वालों को आमंत्रित किया। यह हमारे स्कूल के लिए बहुत महत्वपूर्ण कदम रहा। उन्हें स्कूल में बुलाने का मेरा उद्देश्य यह था कि हम गाँव वालों की चिंताओं को जान सकें और गाँव वाले स्कूल की समस्याओं से रू–ब–रू हो सकें। जब गाँव वाले स्कूल में एकत्र हुए तो उनकी आपसी चर्चा से ही स्कूल को काफी सहायता मिली। स्कूल की स्थिति को देख कर एक सज्जन ने स्कूल के रंग–रोगन के लिए अपने खर्चे से रंग, चूना देने का प्रस्ताव रखा तो स्कूल के रंग–रोगन के कार्य को मुकक्मल बनाने के लिए कई अभिभावक तैयार भी हो गए। मेरी खुशी का कोई ठिकाना न रहा, दिल बल्लियों उछल गया। यह एक छोटी मगर बहुत महत्वपूर्ण जीत थी। स्कूल के रंग–रोगन का कार्य शुरू हुआ इस दौरान थोड़ी जरूरी चीजें स्कूल ने भी उपलब्ध करवाई। इसके बाद स्कूल की खिड़की दरवाजे और शौचालय बना, रसोईघर अपने मूल रूप में तैयार होकर हमारे सामने आया। स्कूल में आयोजित इस कार्यक्रम से न सिर्फ गाँव वाले साथ आ गए बल्कि स्टॉफ के कुछ लोगों का भी सहयोग मिलने लगा।

विजय जी बताते हैं कि स्टॉफ के कुछ सदस्यों का और ग्रामीणों का सहयोग देख कर गर्मियों की छुट्टियों में समर कैम्प लगाने की योजना तैयार की गई, पर समस्या यह थी कि इन दिनों में गाँव में मुट्ठी भर बच्चे ही रह जाते थे। ऐसी स्थिति में भी 2016 में पहली बार समर कैम्प का आयोजन हमने किया और यह हमारे लिए आश्चर्य की बात रही कि हमारे स्कूल में बच्चों का नामांकन तो सिर्फ 122 का था पर समर कैम्प में 200 बच्चों का नाम हमने रजिस्टर किया। हमारे लिए खुशी की बात 200 बच्चों का स्कूल आना भर नहीं था बल्कि उनका 10 दिनों तक नियमित बने रहना भी था। यहाँ गौर करने वाली बात यह रही कि यह बच्चे केवल मेदिया डिंडोर से ही नहीं बल्कि आस–पास के अन्य गांवों से भी आ रहे थे। यह हमारे लिए जितनी खुशी की बात थी उतनी ही चिंता की भी बात थी कि जो बच्चे समर कैम्प में नियमित थे उन्होंने स्कूल खुलने के बाद से स्कूल आना बंद कर दिया था। उनसे बात करके पता चला कि वो कक्षा 4 से 8 के बच्चे हैं और उन्हें अभी तक लिखना–पढ़ना नहीं आता, जिस कारण कक्षा में वो अक्सर हँसी का पात्र बनते हैं। जब बच्चों से यह पूछा गया कि उनको यह समस्या है तो समर कैम्प में नियमित क्यों आए, उनके इस प्रश्न का उत्तर देते हुए एक छात्र ने कहा कि सर कैम्प में आप पढ़ाते थोड़ा थे वहाँ तो कविता, कहानी, खेल यही सब तो होता था। इसके बाद से हमने बच्चों के साथ लिखने–पढ़ने पर केन्द्रित होकर कार्य शुरू किया। कुछ गैर सरकारी संस्थाओं के साथ मिलकर बच्चों के लिए मेलों का आयोजन भी करवाया।

पढ़ने–लिखने की इसी प्रक्रिया में विजय जी की कक्षा में एक बड़ी असाधारण घटना घटी। उनकी

कक्षा के बच्चों ने उनसे कक्षा के दौरान दो सवाल पूछे? पहला सवाल यह था कि सरकार कौन होती है? और दूसरा सवाल था कि सरकार बनती कैसे है? यहाँ विजय जी ने दोनों सवालों के सैद्धांतिक जवाब बच्चों को न देकर उन्हें इसकी प्रक्रिया से गुजारने की कोशिश की। इसके लिए उन्होने अपने विद्यालय में ही बाल सदन के चुनाव का आयोजन करवा दिया। इस चुनाव के बाद बच्चे चुनाव प्रक्रिया को समझने के साथ–साथ सरकार कार्य कैसे करती है, यह भी समझने लगे। अब स्कूल में होने वाले हर कार्य को करने के लिए बाल सदन द्वारा कुछ मंत्रियों का समूह नियुक्त किया गया। यह तो हुई सरकार बनाने की प्रक्रिया और उसके कार्य वितरण की बात, पर इस बारे में शायद ही किसी ने सोचा था कि बच्चे इस प्रक्रिया को देखने और समझने के साथ ही साथ एक नागरिक की जिम्मेदारियों को भी समझने लगेंगे। जैसे अगर कक्षा में चॉक या डस्टर नहीं हो तो इसके लिए बच्चे शिक्षा मंत्री या उसके मंत्रियों को इसकी सूचना देने लगे। अगर स्कूल के पौधों को पानी नहीं दिया गया है तो इसकी जिम्मेदारी पर्यावरण मंत्रालय की होगी। स्कूल के खाने में साफ–सफाई या अन्य किसी तरह की समस्या हो तो उसकी शिकायत खाद्य मंत्रालय को की दी जाने लगी आदि। इस तरह का कार्य अपने आप में अनोखा है जिसकी पहल विजय जैन जी ने अपने विद्यालय में की।

मेदिया डिंडोर स्कूल के साथ शुरू हुए अपने सफर के एक नए अध्याय के बारे में वो बताते हैं कि जिसने न सिर्फ मेदिया डिंडोर बल्कि आस–पास के कई गांवों के लोगों की सोच सरकारी स्कूलों के प्रति बदल के रख दी। वो बताते हैं कि हमारे स्कूल के बच्चे आज तक कभी बांसवाड़ा (शहर) तक नहीं गए थे, पर यह पहला मौका था, जब एक कार्यक्रम में भाग लेने के लिए मुझे अपने स्कूल के बच्चों के साथ दिल्ली जाना था। समस्या बस जाने भर की नहीं थी बल्कि उससे ज्यादा थी वो सर्दियों के दिन थे और हमें बांसवाड़ा के एक गाँव से दिल्ली तक का सफर तय करना था और बच्चों के पास गर्म कपड़े तक नहीं थे। जानने वाले, जिनमें ज्यादातर शिक्षक थे, सभी ने मुझे इस जोखिम को उठाने से मना किया। पर बच्चों के घर वालों ने मुझ पर विश्वास जताया। कुछ जानने वालों ने बच्चों के गर्म कपड़े भी उपलब्ध करवाए और हम चल निकले। हालांकि इस सफर के बारे में जब मैं योजना बना रहा था तब मुझे वास्तव में दिल्ली बहुत दूर नजर आ रही थी, बच्चों के उत्साह और गाँव वालों का साथ पाकर अब दिल्ली बहुत दूर नहीं रह गई थी। हम तीन दिनों तक दिल्ली में रुके और कार्यक्रम में भाग लेने के साथ ही दिल्ली भी घूमे। दिल्ली से लौटकर बच्चों ने अपने अनुभव महीनों गाँव भर में सुनाए। इस बीच यह किस्सा भी कमाल का हुआ। लौटती ट्रेन में बच्चे जब एक दूसरे को कुछ देते तो 'थैंक यू' और गलती होने पर 'सॉरी' बोल रहे थे। जब मेरा इस ओर ध्यान गया तो बड़ी हैरानी हुई। मैंने तो बच्चों को न तो यह शब्द सिखाए थे और न ही कहाँ और कब प्रयोग करना है यह बताया था। यह जो परिवर्तन हुआ दिल्ली से लौटने बाद हुआ जान पड़ा। जो मेरे बच्चों ने दिल्ली के छात्रों के साथ रह कर सीखा था। मैं कुल मिलाकर कहूँ तो बच्चों के साथ काम करते हुए मेरा यह यकीन बनने लगा है कि बच्चों के साथ सीखना–सिखाना सिर्फ किताब तक सीमित होकर नहीं हो सकता। हमारी कक्षाएँ दुनिया भर के ज्ञान का एक छोटा सा हिस्सा भर हैं और शेष ज्ञान तो कक्षाओं के बाहर है। जहां बच्चे आचार–व्यवहार और सामाजिक मूल्यों के साथ

जाने क्या–क्या सीखते हैं। इस सीखने की प्रक्रिया में मैंने अपने बच्चों पर सिर्फ विश्वास किया है और उनके सीखने के रास्ते में आने वाली हर तरह की बाधाओं को दूर करने का प्रयास भर किया है।

स्कूल में हो रही इस तरह की गतिविधियों को लेकर अभिभावक बताते हैं कि हमारे गांव से बहुत कम लोग ही जिले तक गए हैं और आमतौर पर जिले में जाना हमारे लिए बड़ी बात मानी जाती है। ऐसे में स्कूल हमारे बच्चों को दिल्ली में हो रहे कार्यक्रमों में शामिल होने के लिए ले गया, यह हमारे लिए और आस–पास के कई गांवों के लिए बहुत अलग घटना है, हम खुद कभी इतनी दूर नहीं जा पाए हैं। ऐसा पहले तो कभी नहीं हुआ पर अब यह देख के अच्छा लगता है कि लोग बाहर से आते हैं और हमारे बच्चों के लिए सामान लाते हैं। हम से जितना होता है उतना तो करते हैं पर स्कूल के लोग हमारे बच्चों के साथ ठीक वैसा ही व्यवहार करते हैं जैसा कि वो अपने बच्चों के लिए करते हैं।

विजय जी अपने पढ़ाने के तरीके बारे में बताते हैं कि शुरुआती दिनों में जब उन्होने कक्षा में बाल गीत गाना शुरू किया, तब बच्चों के घर वाले बच्चों से कहने लगे कि यह कैसा मास्टर स्कूल में आया है जो गाना सिखा रहा है? पर बच्चों को शिक्षण का यह अंदाज बहुत अच्छा लग रहा था। बच्चों के लिए गीत गाना भर था पर मेरे लिए इसमें सुनना–बोलना और लिखना–पढ़ना छुपा था। विजय जी की ही कक्षा 5 में पढ़ने वाले विनोद के पिता बताते हैं कि इन दिनों तो स्कूल में पढ़ाई हो रही है। देख के अच्छा लगता है कि मेरा बेटा किताब पढ़ रहा है और लिख भी लेता है। पर यह स्थिति हमेशा से नहीं थी। मैं भी इसी विद्यालय में पढ़ा हूँ पर 5 साल यहाँ देने के बाद मुझे कुछ भी नहीं आया, तो मैं वीरपुर पढ़ने गया और फिर से कक्षा 1 से पढ़ा। वो आगे कहते हैं कि अगर मुझे भी इस तरह का पढ़ने–लिखने का अवसर मिला होता, जो आज–कल इस स्कूल में दिये जाते हैं, तो संभवतः में भी आज अच्छी नौकरी में होता। हमारे समय में पढ़ाने का तरीका तो बहुत अजीब था, तब बहुत मारते थे पर यहाँ के शिक्षकों के पास क्या जादू है समझ नहीं आता कि बिना मारे सब कुछ सिखा देते हैं। देश के सुदूर इलाके में बसे मेदिया डिंडोर के बच्चों को हर तरह का एक्सपोजर देने के लिए विजय जी अलग–अलग तरह की गतिविधियाँ स्कूल में करते हैं। इसी क्रम में उन्होने बच्चों को अपने अनुभवों से या कहें कि

खुद से करके सीखने के लिए अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन के सदस्यों के साथ मिलकर स्कूल में बाल शोध मेले के आयोजन की योजना बनाई। जिसके लिए उन्होने बच्चों के बीच इस बात को रखते हुए इस मेले के आयोजन पर बच्चों के विचार जाने और उनकी सहमति पाने के साथ ही उन्होने बच्चों को अलग–अलग समूहों में बाँट दिया। इन सभी समूहों को गाँव के बसने की कहानी, स्कूल बनने की कहानी, खेती के औजारों और लोक गीतों आदि अन्य विषयों पर जानकारी इकट्ठी करनी थी। बच्चों द्वारा संग्रहीत जानकारी को बच्चों के साथ मिलकर व्यवस्थित किया गया। जिसके बाद स्कूल में 'होदवा नू मेरु' (बाल शोध मेला) करवाया गया। आज इन तमाम कवायदों का ही असर है कि 2016 से अब तक स्कूल में बच्चों का नामांकन काफी बढ़ा है। एक तुलनात्मक आधार पर वो बताते हैं कि साल 2016 में स्कूल में बच्चों की संख्या 122 थी जो वर्तमान में 179 हो गई। स्थिति यह है कि दूसरे स्कूलों से और गांवों से जो हमारे स्कूल से दूर हैं, बच्चे यहाँ नाम लिखवाने आ रहे हैं। बच्चे स्कूल में नियमित हैं और जो किसी कारण से स्कूल नहीं आ पा रहे हैं उनकी पूरी जानकारी हमारे पास होती है। अपनी तमाम बातों के बीच विजय जी इस बात को भी रखते हैं कि मेदिया डिंडोर में काम करते हुए कुछ मैं बदला हूँ, कुछ बच्चे, कुछ गाँव वाले और कुछ मेरे स्कूल वाले। बदलने की इस प्रक्रिया में हम सभी अपनी पूरी क्षमता के साथ एक बेहतर कल की ओर बढ़ रहे हैं।

(विजय प्रकाश जैन की राय बहादुर सिंह से हुई बातचीत पर आधारित)

बालजीवन संवारता शिक्षक

हेमंत चौकियाल
प्रभारी प्रधानाध्यापक
राजकीय उच्चतर प्राथमिक विद्यालय
डांगी गुनाऊ, रुद्रप्रयाग, उत्तराखण्ड

सहायक अध्यापक – मंगल लाल शाह, गोपाल दत्त सेमवाल
भोजन माता – सुशीला देवी
नामांकन – 14